भगवद्गीता में प्रचलित योग...

ब्र.कु. बृजमोहन,
अतिरिक्त मुख्य सचिव,ब्रह्माकुमारीज़

श्रीमद्भगवद् गीता विश्व के सभी धर्म ग्रन्थों में सबसे अधिक भाषाओं में अनुवादित ग्रन्थ है जिसे सर्व शास्त्रमई शिरोमणि या सर्वोच्च ग्रन्थ की उपमा दी जाती है। विश्व भर में जीवन दर्शन पर विशेष और सार्वभौमिक विवेचन का दर्जा इस ग्रन्थ को प्राप्त है।

गीता के शुरुआती प्रथम, तृतीय व चतुर्थ अध्यायों के महावाक्यों को देखा जाए तो इसमें प्रमुख रूप से या सार रूप में गीता का ही विवेचन नहीं है बल्कि इसमें योग को पुनर्जागृत किया गया है। ऐसी मान्यता है कि 5000 वर्ष पूर्व परमात्मा स्वयं अवतरित होकर निमित्त मुख कमल द्वारा इस सर्वोच्च ऐतिहासिक वृत्तांत का वर्णन करते हैं। इसलिए गीता ग्रन्थ में परमात्मा द्वारा किये गए वार्तालाप में गंभीर रूप से बार-बार 'भगवान ऊवाच' पद या शब्द का वर्णन किया गया है। गीता के 18 अध्यायों में विविध रूप से योग के सभी पहलुओं व उसकी उत्तरोत्तर प्रगतिशीलता का सम्पूर्ण चित्रण किया गया है।

गीता में योग के विभिन्न पहलुओं जैसे ज्ञान योग, कर्मयोग, सन्यास योग, भक्ति योग, समर्पण योग, अनुभूति योग व मुक्ति योग आदि का वर्णन किया गया

है जो सम्मिलित रूप से योग के ही विभिन्न अंग हैं। कोई भी अपने आप में सम्पूर्ण नहीं है। कुछ योग इसमें कठिन मार्गों को दर्शाते हैं तथा कुछ आसान, तथा इसी क्रम में गृहस्थियों हेतु भक्ति मार्ग, तो बुद्धिजीवियों के लिए ज्ञान मार्ग तथा सन्यासियों के लिए सन्यास मार्ग का वर्णन गीता में है, जो कि किसी भी तरह से स्पष्ट नहीं है।

गीता के अनुसार योग का अर्थ, आत्मा की परमात्मा के साथ प्रेमपूर्ण मानसिक अभिव्यक्ति है। यह अभ्यास हमारे मन को आसुरी वृत्तियों जैसे काम, क्रोध, अहंकार आदि से निकाल उसे शक्तिशाली बनाता है तथा धीरे-धीरे दिव्य गुणों जैसे सत्यता, अहिंसा, करुणा आदि को धारण करता है। इसमें प्रमुख रूप से हमें अपने आप को अजर, अमर अविनाशी आत्मा समझकर, उसका अविनाशी सम्बन्ध उस परम आत्मा से जोड़ने का वर्णन गीता में स्पष्ट रूप से किया गया है।

आज हमारा समय बदल चुका है। योग, आज विविध रूप से हठयोग, सहज योग या अन्यानेक ध्यान व योग का रूप ले चुका है। इसमें शारीरिक व्यायाम, श्वास-प्रश्वास की क्रिया, मन को शिथिल करने की क्रियाएं शामिल हैं। आज तो यह नैतिकता, मौलिकता, मूल्यों आदि के दायरे को लांघ चुका है। कुछ योग के ऐसे अभ्यास सिखाये जा रहे हैं, जिसका योग से कोई लेना देना नहीं है, यह तो एक तरह से योग पर कलंक लगाने जैसा है। उदाहरण के लिए कनाडा तथा अमेरिका के कुछ पार्लर व स्टूडियो में 'गांजा योग' की शिक्षा दी जा रही है, जो एक प्रकार से मेरिजुआना नामक धूम्रपान है व शारीरिक रूप से नुकसानदेह भी।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने 21 जून को अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस के रूप में मनाये जाने की घोषणा की है। योग को पूरे विश्व भर में फैलाने हेतु यह एक बहुत अच्छा अवसर है किन्तु चुनौतीपूर्ण भी। वो इसलिए कि किस प्रकार के योग को योजनाबद्ध तरीके से भारत को विश्व मंच पर लाना चाहिए जिससे कि इस उत्सव को सार्थक बनाया जा सके। योग की स्पष्टता होने के बावजूद भी कुछ योग के आकांक्षी, योग की जटिलता और इसकी भूलभुलैया में पूर्णतया भ्रमित हो चुके हैं। इसमें भारत से मूल रूप से उत्पन्न योग अर्थात् गीता ही सभी के मार्गदर्शन का कार्य करेगी।

योग के विषय को सार्वभौमिक चेतना के स्तर पर पहुंचाना अति आवश्यक है। यह निश्चित रूप से एक लम्बी प्रक्रिया है। इस बीच विभिन्न प्रचलित योग विधियों से भिन्न योग की एक अलग स्वास्थकर और लाभकारी विधि तैयार कर, इसकी पहचान कर सकते हैं। हो सकता है कि इस पद्धति पर संयुक्त राष्ट्र अपने सदस्य देशों के साथ बातचीत में सहमति दे। यह इस वर्ष जून में मनाये जाने वाले अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस समारोह में उन सब योग आकांक्षी के लिए शिक्षाप्रद होगा जो आज योग के नाम पर योग की प्रचलित गलत पद्धतियों को अपना रहे हैं।

परमात्मा की मधुर स्मृति ही:योग

सम्बन्ध जुटाने का पहला साधन है – परिचय, पहचान तथा ज्ञान। जब कोई बच्चा पैदा होता है तो किसी मनुष्य के साथ उसका पिता-पुत्र का सम्बन्ध तो जन्म-काल ही से हो जाता है परन्तु उस सम्बन्ध को जुटाने के लिए बच्चे को यह पहचान दी जाती है कि अमुक-व्यक्ति उसका पिता है और अमुक नारी उसकी माता है। यह ज्ञान अथवा पहचान बच्चे का अपने माता-पिता के साथ सम्बन्ध जोड़ देता है। अत: जैसे सांसारिक दृष्टिकोण से पिता-पुत्रादि का सम्बन्ध जुटने का पहला साधन परिचय(ज्ञान), निश्चय और निश्चय के आधार पर स्मृति है, ठीक उसी प्रकार योग के लिये अथवा परमपिता परमात्मा से सम्बन्ध जुटाने के लिए यह आवश्यक है कि सबसे पहले तो मनुष्य को परमात्मा के गुणवाचक नाम, ज्योतिर्मय रूप, परमधाम, ईश्वरीय गुण, दैवी सम्पत्ति आदि का यथार्थ परिचय हो, तब वह उसमें निश्चय करे और उसके आधार पर वह परमात्मा की स्मृति में रहे। उसी स्मृति में एकाग्रता की स्थिति ही योग है।

योग ही समाज-कल्याण का एक मात्र उपाय

अत: योग ही मानसिक तनाव को दूर कर मानव-मन को शान्ति प्रदान करने का, समाज की समस्याओं को दूर करने का पारस्परिक सम्बन्धों में स्नेह, सहयोग, त्याग और सहिष्णुता लाने का एक मात्र तरीका है जिसे सभी को अपनाना चाहिए क्योंकि 'योग' का अर्थ ही है - मानव का प्रभु से सम्बन्ध जोड़ना तथा मानव का मानव से सहयोग।

जो समझे, वो ही होगा आनंदित

1. हम देखते हैं कि मनुष्य में चार प्रकार का अज्ञान अथवा मिथ्या ज्ञान है। एक तो यह कि वह स्वयं को 'देह' मानता है। हम वास्तव में तो चेतन आत्मायें हैं परन्तु हम कार्य-व्यवहार करते समय स्वयं को देह मानकर चलते हैं। इस देह-अभिमान से ही अनेक प्रकार के विकर्म होते हैं और क्लेश उत्पन्न होते हैं।

2. अज्ञान अथवा मिथ्या ज्ञान का दूसरा रूप है – विनाशी को अविनाशी मानना, मनुष्य यह बात भूल जाता है कि यह देह विनाशी है, इसे एक दिन मिट्टी में मिल जाना है और ऐसा होने पर सभी धन-पदार्थ, मित्र-सम्बन्धी मुझसे छूट अथवा बिछुड़ जायेंगे। इस संसार की कोई भी वस्तु शाश्वत अथवा अविनाशी नहीं है।

यहाँ का सभी-कुछ परिणामी और परिवर्तनशील है।

3. अज्ञान का तीसरा रूप है पाप को कर्त्तव्य अथवा पुण्य मानना और पवित्र कर्म को अनावश्यक या कल्पना मानना अथवा तुच्छ वस्तु को मूल्यवान और मूल्यवान को तुच्छ मानना। जो तमोगुणी, भ्रष्ट, विकृत अथवा त्याज्य है, उसे ग्राह्य मानना अथवा पतित को पावन और पावन को पतित मानना – यह ऐसा अज्ञान है जो मनुष्य से बहुत ही विकर्म कराता है। आज लोग समझ रहे हैं कि संसार बहुत आगे बढ़ गया है, मनुष्य ने बहुत उन्नति की है, यह संसार बहुत सुखदायी बन गया है। परन्तु हम देखते हैं कि वास्तव में इस कलिकाल में सब-कुछ तमोगुणी, निस्सार और विकृत हो गया है।

4. अज्ञान अथवा मिथ्या-ज्ञान का चौथा रूप है- दु:ख को सुख मानना। उदाहरण के तौर पर 'काम' विकार आदि-मध्य-अन्त दु:ख देने वाला है। इससे तत्क्षण भी शारीरिक शक्ति का ह्रास होता है, मानसिक पतन भी होता है ।

चित्रण राजयोग की सर्वोत्तम विधि

हम देखते हैं कि संसार में किसी वस्तु अथवा सिद्धान्त का निर्माण होने से पूर्व तो मनुष्य उसे मन में कल्पित ही करता है। एक बढ़ई किसी नये नमूने से एक मेज बनाना चाहता है। मेज बनाने से पहले तो वह उसके डिज़ाइन की कल्पना करता है। भवन का निर्माण होने से पहले भवन-कला का विशेषज्ञ भवन को कल्पना के रूप में अपने मन में देखता है। किसी देश के कर्णधार उस देश की उन्नति के लिये जो योजना बनाते हैं, वह पहले उनसे मन में कल्पना ही तो होती है। वैज्ञानिकों ने जितने भी सिद्धान्त गढ़े हैं अथवा जितने भी आविष्कार किये हैं उनका जन्म वैज्ञानिकों के मस्तिष्क में कल्पना ही से हुआ है। कल्पना प्राय: चित्र, रंग, ध्वनि, कलाकृति के रूप में होती है। अत: हमें मन के परदे पर बार बार आत्मा का चित्रण करना है, परमात्मा का चित्रण करना है ,यह अति सहज है। तो जबकि हमारे प्रयोग में आने वाली सभी वस्तुएं मूलत: कल्पना ही की उपज हैं, तब कल्पना के प्रति हमारी घृणा-दृष्टि क्यों? कल्पना स्वयं में कोई बुराई थोड़े ही है। हाँ, यदि कल्पना साकार नहीं हो सकती अथवा यदि उसका आधार कोई मान्य तथ्य नहीं है, तब तो यह कोरी कल्पना ही है।